इतिहास का दर्द

इतिहास का दर्द

रणजीत

की पिछले दस वर्षों की
चुनी हुई पचास कविताएं

नवयुग ग्रंथ कुटीर
बीकानेर

प्रथम संस्करण
दिसम्बर, १९६७

मूल्य
५०० पैसे

क्योंकि रणजीत के पहले काव्य-संकलन 'ये सपने ये प्रेत' के नये संस्करण का अब इरादा नहीं है इसलिए उसकी अधिकांश महत्वपूर्ण सामग्री का उपयोग इस संकलन में कर लिया गया है।

मुद्रक
शिक्षा-भारती प्रेस
बीकानेर

दृष्टिकोण

वैसे तो जो कुछ मुझे कहना है, मैंने इन कविताओं में कहा ही है और स्पष्टतापूर्वक भी कहा है लेकिन फिर भी, क्योंकि यह पुस्तक कोई प्रबंध कविता नहीं, पचास साठ स्वतन्त्र कविताओं का एक संकलन है, यह स्वाभाविक ही है कि इसकी अलग अलग कविताओं में मेरे अब तक के अनुभूत सत्य के अलग अलग रूपों और पक्षों को ही अभिव्यक्ति मिली हो। एक वृत्त की परिधि पर के इन अलग अलग बिन्दुओं को मिलाने वाली रेखा का काम मैं इन पंक्तियों से लेने की कोशिश करूँगा।

मैं अपने आपको 'कवि' नहीं मानता, न 'कवि' कहलाना ही पसन्द करता हूँ। यह मेरी नम्रता नहीं है। वास्तव में मैं 'कवि' शब्द की प्रचलित धारणाओं के साथ अपने आपको समायोजित नहीं कर पाता। जब वे किसी को कवि कहते हैं तब साधारणतः लोगों का मतलब होता है

कि वह कोई मन्त्रद्रष्टा ऋषि है। मसीहा है। दिव्य शक्तियों से प्रेरित है। कि उसकी वाणी में सरस्वती या कोई और देवी-देवता या सब देवी देवताओं का गुरु घंटाल स्वयं ईश्वर अभिव्यक्ति पाता है।

या कि वह कन्धों पर केश बिखेरे कोई अर्ध विक्षिप्त सा प्राणी है जो रात ढलते किसी पेड़ की छाया के पास खड़ा होता है कि कविता उसकी आँखों से चुपचाप उमड़ने लगती है। कि वह कोई सौंदर्य

प्रेमी कल्पना जीवी है, फूल खाता है और ओस पीता है।

या कि वह तुकबाज है—आशु कवि। जहाँ किसी ने ललकार दिया देखें इसी बात पर हो जाय तुम्हारी एक कविता! वहीं तुकें जोड़ कर सुना देता है। कि उससे चप्पल के टूटने और कुर्सी के गिरने से लेकर महात्मा गांधी के जन्म दिन और जवाहरलाल नेहरू की पुण्य तिथि तक किसी भी विषय पर उसी वक्त कविता लिखाई जा सकती है।

लेकिन मेरे साथ मुश्किल यह है कि मैं न तो अपने आपको मसीहा मानने के मानसिक रोग से पीड़ित हूँ, न फूल खाकर और ओस पीकर जिन्दा रह सकता हूँ और न होली दिवाली, पन्द्रह अगस्त और छब्बीस जनवरी पर साप्ताहिक पत्रों के सम्पादकों को ही खुश कर सकता हूँ। इसीलिये कहता हूँ कि मैं कवि नहीं हूँ मैं तो फकत एक कविता लेखक हूँ। मैं कविता करता नहीं, लिखता हूँ। वह अपने आप बहती नहीं, मैं सोच समझ कर बहाता हूँ। कविता मेरे सामने अवचेतन का क्रन्दन नहीं अहम् का विस्फोट नहीं अपने या किसी के मनोरंजन या रस प्राप्ति मात्र की चीज नहीं, अपनी सामाजिक अनुपयोगिता के विरुद्ध अपने आपको प्रमाणित करने का प्रयत्न नहीं, एक सजग सामाजिक कर्तव्य है अपने आस पास के संसार को और उसके साथ ही साथ खुद अपने आपको अपने सपनों के अनुकूल ढालने का एक प्रयत्न है।

जीवन और जगत को मैं विकास की एक निरन्तर प्रक्रिया के रूप में देखता हूँ। यह एक प्राकृतिक प्रक्रिया है पर मनुष्य इसके नियमों को समझ कर इसकी गति को प्रभावित कर सकता है। जीवन और जगत के नियमों को समझ कर उन्हें अनुशासित करने की इन्हीं मानवीय कोशिशों के दौरान में मानवीय संस्कृति जन्म लेती है—विज्ञान और विभिन्न कलाएं, कविता भी जिनमें से एक है, पनपती और विकसित होती है। और इसी काम में सहायक होना ही उसकी सार्थकता भी है।

साहित्यकार की, और वैज्ञानिक की भी मानवीय विकास की प्रक्रिया में सहायक होने की भूमिका दो स्तरों की हो सकती है एक सामयिक और दूसरी अपेक्षाकृत अधिक स्थायी। वर्तमान स्थिति से उदाहरण लिया जाय। विश्व में पूंजीवादी और मानववादी शक्तियों का संघर्ष घमासान है। एक वैज्ञानिक मानववादी ताकतों के लिए युद्ध सामग्री बनाकर भी सामाजिक विकास की प्रक्रिया में एक तरह से सहायक ही होता है। इसी प्रकार का योग उस साहित्यकार का होगा जो सामयिक राजनीति पर जोश-खरोश के साथ लिखकर प्रतिक्रियावादी ताकतों पर प्रहार करता है। लेकिन इनकी अपेक्षा अणुशक्ति और पेनिसिलीन बनाने वाले वैज्ञानिक और मानव आत्मा का परिष्कार कर उसे धर्मों देशों और वर्गों से ऊपर उठा कर सम्पूर्ण मानवता के प्रति जिम्मेदार बनाने की कोशिश करने वाले साहित्यकार का योग अधिक स्थायी और अधिक महत्व का माना जायेगा। लेकिन स्थायित्व सामयिकता का विरोधी नहीं है कि उसके तिरस्कार से ही प्राप्त किया जा सके। बल्कि सच तो यह है कि ये दोनों भूमिकाएं एक दूसरी से अलग अलग रख कर सफलतापूर्वक अदा की ही नहीं जा सकतीं। वही साहित्य स्थायी भी हो सकता है जिसने पहले अपनी युगीन आवश्यकताओं को पूरा कर लिया हो, बशर्ते कि पहला कर्तव्य निभाते हुए उसका दृष्टिकोण एकदम संकीर्ण न हो गया हो।

बात

एक जिम्मेदार साहित्यकार को ये दोनों विरोधी से लगने वाले कर्तव्य एक साथ निभाने होते हैं। साहित्य की शाश्वतता के नाम पर अगर उसने वर्तमान से आँखें मूँद लीं तो वह जीवन की शक्तियों से छिटक कर भ्रमों के देश में भटकने लगेगा। और अगर उसने तात्कालिक कर्तव्य के लिए अपने अधिक महत्वपूर्ण कर्तव्य को भुला दिया तो वह उसकी अधिक गम्भीर क्षमताओं का अनुपयोग होगा। सामयिक राजनीति से तटस्थ वह रह नहीं सकता जिसे प्रचार कहा जाता है, उससे बिल्कुल विरत वह हो नहीं सकता पर साथ ही इसके कारण वह अपने दूसरे अधिक महत्वपूर्ण दायित्व को भी भूल नहीं सकता। एक ओर उसे वर्ग संघर्ष को बढ़ावा देना होता है तो दूसरी ओर उस भविष्य के सपने पर भी नजर रखनी पड़ती है, जब मनुष्य और मनुष्य एक दूसरे के दुश्मन नहीं होंगे। यह एक द्वन्द्वात्मक स्थिति है कि पहला काम उसे दूसरे उद्देश्य से प्रेरित होकर ही करना पड़ता है।

एक प्रगतिशील साहित्यकार की जिन्दगी एक निरन्तर संघर्ष होती है। उसे न केवल अपने बाहर के अपने समाज के सामन्तवाद और पूँजीवाद से लोहा लेना होता है वरन साथ ही अपने अन्दर के सामन्ती और पूँजीवादी संस्कारों और धारणाओं से भी लगातार संघर्ष रहना पड़ता है। जीवन को थोड़ी यांत्रिक दृष्टि से देखने वाले लोग साहित्यकार के केवल बाहरी—सामाजिक संघर्ष को ही और इसलिए उसी साहित्य को जो इस संघर्ष में सीधा काम आता है सर्वाधिक महत्व देना चाहते हैं। किन्तु जहाँ तक स्वयं साहित्यकार का सवाल है उसके आन्तरिक संघर्ष का महत्व भी कम नहीं है। क्योंकि उसमें जीतते रहने के बल पर ही बाहरी संघर्ष में वह अपनी भूमिका सफलतापूर्वक अदा कर सकता है। यह अलग बात है कि बाहरी संघर्ष में भाग लेना मात्र कई बार उसको भीतरी संघर्षों में विजय देता रहता है। दोनों संघर्ष एक दूसरे के पूरक और एक दूसरे पर आधारित हैं। मैंने इस सर्वांगीण संघर्ष के दोनों पक्षों का रेखांकन की कोशिश की है। इसका प्रमाण एक तरफ मेरा संग्रह "ईश्वर और मेरी

कलम तुम्हारी किस्मत' जैसी कविताएं हैं तो दूसरी ओर 'बिकते आदम बनती लाशें', 'ये अपने थे प्रेत' तथा 'फाउस्ट के कन्फेशन' जैसी कविताएं।

पूंजीवादी समाज में रहते हुए अपने आपको मानववादी बनाए रखना एक कठिन मानसिक साधना है, जो हर जिम्मेदार प्रगतिशील साहित्यकार को करनी पड़ती है। विचारों से पूरा मानववादी होकर भी वह अपने सामाजिक जीवन को अपने आदर्शों के अनुकूल ढाल नहीं सकता [क्योंकि मानववाद मेरा मतलब वैज्ञानिक मानववाद से ही है एक सामाजिक दर्शन है और कोई व्यक्ति उसका पूरा सामाजिक व्यवहार तब तक नहीं कर सकता जब तक कि पूरा समाज ऐसा करने के लिए तैयार नहीं हो जाता या बाध्य नहीं कर दिया जाता। जब तक समाज व्यवस्था में परिवर्तन नहीं आ जाता तब तक व्यक्तिगत रूप से ऐसा करने की कोशिश निष्परिणाम गांधीवादी मूर्खता ही होगी।] और जीवन में पूंजीवादी व्यवहार को स्वीकार करके भी वह अपने मन को मानववादी आदर्शों के प्रति निष्ठावान बनाये रखना चाहता है। यह एक खास तनाव की स्थिति है और इसमें बने रहने के लिए उसे लगातार अपने परिवेश से और अपने आपसे लड़ते रहना पड़ता है।

मेरी रुचि के तीन प्रधान केन्द्र हैं — साहित्य, साम्यवाद और स्त्रियां। स्पष्टता के लिए इन शब्दों के साथ एक एक विशेषण और लगा दूं — सुरुचिपूर्ण साहित्य सच्चा साम्यवाद और सुन्दर तथा स्नेहशील स्त्रियां।

कविता में अनुभूति का स्थान सर्वोपरि है इस विषय में दो रायें नहीं होनी चाहिए लेकिन अनुभूति का मतलब हमेशा प्रत्यक्ष अनुभूति से ही नहीं होता। कई बार अनुभूति किसी वास्तविक घटना या स्थिति के प्रत्यक्षीकरण की तरह किसी काल्पनिक घटना या स्थिति के प्रत्यक्षीकरण की भी हो सकती है। फिर किसी दूसरे की अनुभूत स्थिति से संक्रमण द्वारा भी उसकी अनुभूति संभव है। अपनी कविताओं की

आपेक्षिक स्थिति के माध्यम से ही वह अपनी 'बात कहती' है। शब्दों की एक व्यवस्था जो प्रभाव डाल सकती है जिन संवेगों को जगा सकती है हो सकता है वहीं शब्दों की दूसरी व्यवस्था उनको न जगा सके। कविता को कविता बनाने वाली चीज़ पद्य या गद्य शैली नहीं उसकी अभिव्यक्ति का विशेष ढंग और उसका रागात्मक अप्रोच है।

कविता में छंद लय और तुक की दो लाभ कमाए हैं। एक तो ये कविता को स्थायित्व देते हैं अर्थात उसकी स्मरणीयता बढ़ाते हैं। और दूसरे ये उस स्थिति के उपकरण बनते हैं जिसे काडवेल 'शरीर शास्त्रीय संमुग्धता' कहा है और जिसके बिना श्रोताओं को कविता के रङ्ग में रंग पाना असम्भव है। अर्थात छंद लय और तुक के कारण कविता का श्रोता तन्मय होकर उसे सुनने लगता है उसके क्षेत्र से बाहर नहीं भटक पाता और इस प्रकार की शरीर शास्त्रीय संमुग्धता के साथ ही कविता अपने श्रोताओं पर अपना वांछित प्रभाव जमाना शुरू करती है। छंद लय और तुक के ये दोनों उपयोग कविता के प्रारम्भ काल से चले आ रहे हैं। आज भी कविता का एक अंश निश्चय इन उपयोगों को सार्थक करता है। लेकिन अब कविता धीरे धीरे एक पाठ्यवस्तु के रूप में भी विकसित होती जा रही है। प्रकाशित रूप में उसका स्थायित्व उतना स्मरण पर कम उसके कागज की स्थायिता पर अधिक आश्रित होता जा रहा है। इसी प्रकार शरीर शास्त्रीय संमुग्धता के पुराने उपकरणों का स्थान भी आकर्षक छपाई विशिष्ट नायक और उसके लेखक के प्रति पाठक की पहले से बनी हुई धारणा उसकी प्रतिष्ठा आदि तत्व लेते जा रहे हैं।

कविता अतुकान्त होकर भी बेतुकी नहीं बन जाती, लयहीन होकर भी विशृंखल नहीं हो जाती।

कहने का मतलब यह है कि छन्द, लय और तुक कविता के शिल्प के अवयव हैं और इनके निवाह से यदि वस्तु पर कोई आघात नहीं पहुंचता तो वह प्रशंसनीय है, पर यदि ऐसा नहीं हो सकता हो, तो इनका अभाव शिल्प के अन्य अवयवों से पूरा किया जा सकता है, यही मेरी नीति रही है। न छन्द का विशेष आग्रह है, न छन्द हीनता का। आग्रह है तो सिर्फ उस 'बात' का जिसे मैं कहना चाहता हूं। और उसके लिए अब आप मेरी कविताओं की ओर बढ़ सकते हैं।

अनुक्रम

इतिहास का दर्द

पीले प्रेतो की बस्ती मे

कभी कभी डर सा लगता है
इस पीले प्रेतो की बस्ती में रहते रहते हो
प्रेत न मैं खुद ही हो जाऊ
उन सब जिन्दा इन्सानों की तरह जिन्होंने
पहले स्वर में
मानवता की विजय-पताका फहराई थी
किन्तु जिन्हें फुसला-फुसला कर

इतिहास का दर्द

चाँदी के इस चक्रव्यूह मे लाकर
इन प्रेतो ने
आज प्रेत ही बना लिया है ।

यों तो अपने पर मुझको विश्वास बहुत है, लेकिन
आसपास की स्थितियो के प्रभाव को भी
झुठलाना मुश्किल है
ठीक है—
इन्सानियत के प्यार की यह पूंजी कुछ हल्की नहीं है
कभी कभी पर
नोटों के कागज भी कहीं अधिक भारी हो जाया करते हैं
मन के गहरे विश्वासो को
तन की भूख हिला देती है
रोटी की छोटी सी कीमत भी कभी कभी
इन बडे बडे आदर्शों को रेहन रख कर
मिट्टी में सब मिला देती है ।

यदि ऐसा हो कभी
कि इस से पूजी का अजगर मुझको भी
प्रेतो के हाथों में भी बिक जाऊ
मानवीय क्षमता, समता के गीत छोड कर
प्रेतों का ही यशोगान करने लग जाऊ
तो ओ छलना से बचे हुए जिन्दा इन्सानो !
मुझको मेर वे गीत सुनाना
जो मैंने कल प्रेतों को इन्सान बनाने को लिखे थे
प्रेतों में सोया ईमान जगाने को लिखे थे
एक ओर बिकते आदम —
एक ओर बनती छाया ॥

उन गीतों की शक्ति तौलना
हो सकता है
उनकी गर्म सास फिर मेरे
मुर्दा मन में प्राण फूक दे
किरणों की अ गुलिया उनकी
चांदी की पर्तों में दबे पडे
इ सानी बीजो को अ कुर दे जावें
फिर से शायद
भटका साथी एक तुम्हारा राह पकड ले
और तुम्हारा परचम लेकर
लडने को प्रस्तुत हो जाये—
कभी कभी डर सा लगता है ?

जूझती प्रतिमा

नहीं रहा मैं अपने पथ पर आज अकेला
क्योंकि तुम्हारी भी आँखों में
कल के विकल स्वप्न जागे हैं
तुमने भी निर्मम होकर, अतीत के
तोड़े सभी मोह-तागे हैं
स्मृतियों में जीना तुमने भी छोड़ दिया है
और धधकते वर्तमान का

तुमने भी विष-पान किया है
ताकि भविष्यत के अपने सपनों को
तुम भी सुधा सिक्त कर पाओ।

समझ गये हो तुम भी, इस मानव समाज के
अनगढ़ शिलाखंड के भीतर
मूर्तिमान होने को जूझ रही जो
प्रतिमा—
सब पाषाणी बंध काट कर
उसको बाहर लाना होगा
मिट्टी की पर्तों में दबी हुई छटपटा रही जो
एक अजन्मी दुनिया की उस नयी पौध को
हृदय-रक्त से सींच हमें उमगाना होगा।

सहमी सी नजरों से पर इस तरह न देखो
सपनों के रखवाले केवल हम्हीं नहीं हैं
हम पर ही उन्माद नहीं छाया भविष्य का
जगती के सुख-दुख के मसले
सिर्फ हमारे ही दिल पर के भार नहीं हैं
हम-मंजिल हैं बहुत हमारे
जो नयनों में सपन
दिलों में तपन
सिरों पर कफन बांध चलते हैं!

आओ हम भी जल्दी-जल्दी पग बढ़ाएं
अंधियारे के दैत्यों से जो लड़े जा रहे
नवयुग का ध्वज लिए हाथ में बढ़े जा रहे
रक्त बीज को बो कर जो आगामी कल को

सात निरत से बढ़े जा रहे
उन लोक हरावल में चलने वालों से कदम मिलाए
ताकि हमारी सबकी प्राणों में जो छाये
वे सपन-रस स्वप्न कभी सच्चे बन पाए।

नयी साधना

'बोधिवृक्ष' की छाया में हम भी बैठे हैं
हमने भी सोचा है, मनन किया है
फिर पाया आलोक ज्ञान का
अपने दीप स्वयं बनकर के
'सुगति-मार्ग हमने भी ढूंढा
जगती के सुख-दुख के कारण
और निवारण

हम भी समझे
बहुजन हित के लिए 'संघ' की शरण ग्रहण की
सुना रहे हैं जन-जन को संदेश साम्य का
घूम घूम कर
'पशु-बलि' का विरोध हम भी करते हैं
फिर भी यदि अन्वेषण के परिणाम हमारे
गौतम से कुछ विलग रहे हैं
तो यह बस इसलिए कि गौतम ने केवल
एक बार जीवन देखा था
—प्रासाद खोल कर—
जरा-मृत्यु के एक रूप में
इसलिये वे
जन्म-मरण के चक्कर को ही
दुख का मूल समझ बैठे थे
किन्तु हमारे आगे
अच्छी तरह जिन्दगी को जी सकने के सच्चे रस्ते हैं
लोगों की रोटी रोजी की
उलझी हुई समस्याएं हैं।

हमने भी वश किया 'इगला औ' पिंगला' को
प्राणों का संयम हमने भी सीखा
—सांस रोक कर हम भी करते रहे प्रतीक्षा—
युग युग से सोयी जीवन की 'कुण्डलिनी' को
साध, जगाकर किया ऊर्ध्वमुख
लेकिन समझ गये जल्दी ही
अपना यह नाडी मंडल तो बहुत सूक्ष्म है

इसीलिये तो
अपने से बाहर के जग की नाडी आज टटोल रहे हैं
आत्म-दमन तो युग-युग से करते आये हैं
किन्तु बाहरी रिपुओं की भी
—अधिक प्रबल जो—
ताकत आज भुजाओं पर हम तौल रहे हैं
डोल रहे हैं
मेहनत का तप और स्वेद की भस्म रचा कर
नगर-नगर में, गांव-गांव में
किन्तु यज्ञ का नहीं
साम्य का 'अलख' जगाने
क्योंकि आज हर साधक के सम्मुख
शून्य-गगन से धरा-सत्य पर आने के अतिरिक्त
नहीं पथ कोई
टूटी बिखरी मानवता का 'योग' छोड़कर
कोई सम्यक् योग नहीं है।

हम भी झूम झूम कर गाते
मिलों-कारखानों-खेतों में
गीत प्रीत के
'कंस'-ध्वंस के
'कान्ह'-जीत के
वृंदावन की कुंजगलिन में
जैसे सूरा झूम रहा हो
'सखा-भाव की भक्ति' हमारी भी है
किन्तु हमारा कान्ह
सूर के सखा श्याम से अगर भिन्न है

तो यह सब इसलिए कि सूर ने
केवल एक श्याम को पहचाना था
और हमारी आँखें आज
लाख-करोड़ों बाँट गई हैं।

मर गया ईश्वर !

"किस अभागे को अरे इस धूप में दफना रहे हो
और इसकी मौत पर क्यों खुशी से चिल्ला रहे हो
कौन है ऐसा विचारा, दो बता ?"

"मर गया ईश्वर, नहीं तुमको पता ?"

"मर गया ईश्वर ?
ईश्वर कि जिसने स्वयं अपने हाथ से धरती बनायी

तुम्हारे लिए

मैं मनुष्य का गायक हूँ
मनुष्य   अपने तमाम रूपरंगों और ढंगों में मनुष्य ही
मेरी कविताओं का विषय है
और वही इनका उद्देश्य ।

मैं मनुष्य का गायक हूँ
सब मनुष्यों का ।

रणजीत

मै पीले मगोलों और काले हब्शियों का गायक हूँ
लम्बे आर्यों और नाटे द्रविडों का
सभ्य योरोपियो और असभ्य अफ्रीकियो का
और उन सब का
जो आर्य और द्रविड
जर्मन और जापानी
बौद्ध और ईसाई कुछ भी नहीं हैं
सिर्फ मनुष्य हैं !

सब लोग मेरे लोग हैं
और सब धरतिया मेरी धरतिया
वे बर्फ ओढे पहाड जिनका पहरा देते हैं
और वे
जो समुद्र के पेट म से मानो उलीच कर निकाली गयी हैं
वे जो गेहूँ उगाती हैं
और वे जो लोहा उगलती हैं
पेट्रोलियम के फव्वारे छोडने वाली
और लावे की आग बरसाने वाली
काली और पीली
लाल और भूरी
सब जमीन मेरी जमीनें हैं !

मैं मनुष्य का गायक हूँ—
पूरे मनुष्य का !
उसके शरीर और उसकी आत्मा का
उसके पेट की भूख और उसकी आंखों की प्यास का
उसके मन की उडानों और उसकी आत्मा की गहराइयों का
उसके अतीत, उसके वतमान और उसके भविष्य का !

और आरोपित किसी आत्मा के उन्मुक्त
मुहावरों को रटते रटा
अपने प्रसन्न सिरों को धारण करा रहे हो
धर्म के बेहूदा उपदेशों को गान करते-करते
अपनी चाँदनी रातों पर स्याही पोत रहे हो।
तुम जो इतिहास के नाम पर अतीत पूजा
अपना [illegible] पर मनपशास्त्र

८ आने वाले विद्रोहियों के नाम

अगर कभी ऐसा हो
कि मेरा सत्य समय की शक्तियों से थके
टूट जाय
और झूठ की तरह निष्प्राण होकर राह पर गिर पड़े
तो आ निरंतर संघर्षशील सत्य को वहन कर
    मेरी राह पर मुझसे और आगे बढ़ने वालो !
मेरे निष्प्राण सत्य की छाया से अभिभूत मत हो जाना—
उसके मोह को काटकर आगे बढ़ जाना !

अगर कभी ऐसा हो
कि मेरा विद्रोह जडता के सामने सिर झुका दे
हार जाय
और गुलामी के स्वीकरण की तरह निष्क्रिय होकर राह
पर गिर पड़े
तो ओ निरन्तर प्रगतिशील विद्रोह को वहन कर
मेरी राह पर मुझसे आगे बढने वालो !
मेरे निष्क्रिय विद्रोह की लाश से चिपके मत रह जाना—
उसके सीने पर पाँव रखकर आगे बढ जाना !

एक निष्कर्ष

मीरा नहीं हो तुम
न मैं ही हूँ तुम्हारा गिरिधर लीलाधाम
तुम्हारे ओंठ छूकर भी
जमाने का जहर अमृत नहीं होता
न मेरे चाहने भर से ही बनता है
तुम्हारी ओर बढ़ता साँप
शालिग्राम।
इसलिये

तुम जहर का प्याला उठा कर
आज राणा के ही होठों से लगाने के लिए
जो कड़ा करलो
और थे ?
मैं अभी इस सांप का सिर कुचलता हूं !

फाउस्ट के कन्फ़ेशन

अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए
मैंने अपनी आत्मा को रेहन रखा था
सोचा था
कि जब फिर मेरे पास पर्याप्त शक्तिया हो जाएगी
उसे छुडा लूगा
लेकिन मुझे क्या पता था
कि ज्यो ज्यो मेरी शक्तिया बढ़ती जाएगी
ब्याज का कर्ज भी बढ़ता ही जाएगा

ग्रौर ग्राखिर जब मैं उसे छुडाने लायक हुग्रा
मेरी ग्रात्मा नीलाम हो चुकी थी ।

ग्रपनी मिट्टी के बचाव के लिए
मैंने ग्रपने विद्रोह को सुलाया था
सोचा था
जब मैं फिर लडने लायक हो जाऊगा
उसे जगा लूगा
लेकिन मुझे क्या मालूम था
कि वह ग्रफीम जो मैंने उसे सुलाने के लिए दी थी
उसके लिए जहर साबित होगी
ग्रौर ग्राखिर जब मैं लडने लायक हुग्रा
मेरा विद्रोह मर चुका था ।

उफ !
जिसे ग्रापद धर्म की तरह स्वीकार किया था
उसे जीवन दर्शन बनाने के लिए मजबूर हुग्रा !!

ग्रब मैं भटक रहा हूँ
ग्रपने ग्रात्मा हीन ग्रस्तित्व के कन्धों पर
ग्रपने ग्रसफल विद्रोह की लाश रक्खे हुए
ताकि देख लें मेरे हम सफर
समझ लें
कि किस तरह समझौता
—एक सामयिक समझौता भी—
विद्रोह की ग्रात्मा को तोड देता है ।

प्यार अभी मजबूर है।

लगातार चल रही है फरहाद की कुदाल, लेकिन
बहुत बडा है अभी परम्पराओ का पहाड
फादना तो चाहती है शीरी की चाहें, लेकिन
बहुत ऊची है अभी सरमाये की दीवार
कब्रों के साथ जाती हीरो की चीखें अभी
चुभती ही जा रही हैं रांझो की रूहो मे
खोजना ही फिर रहा है मजनू अभी लैला को
चांदी की रेता के चलते फिरते ढूहा म

पेड़ पर टका पड़ा है मिर्ज़े का तरकश अभी
साहिबा की प्रार्थना बेकार होती जा रही है
डाबो सी चल रही हैं महीवाल की बाहें, लेकिन
व्यवस्था के बर्फानी सन्नाटे में
सोहिनी की डूबती पुकार खोती जा रही है
रस्मों की उमड़ी हुई चिनाव में
गल रहा है प्यार का कच्चा घड़ा
किनारा अभी दूर है—
प्यार अभी मजबूर है !

विष-पुरुष

पास मत आओ मेरे
मुझसे न पूछो बात कोई
मत बढाओ हाथ मेरी ओर तुम सम्पर्क का—
मैं विष-पुरुष हूँ !

बहुत संक्रामक हुआ करते हैं नीले जहर के कीडे
कहीं ऐसा न हो
इस जहर की लहर

तुम्हारी धमनियो के रक्त में भी उमडने लग जाय
आग
अन्तर मे दबाए हूँ जिसे मैं
झपट कर कोई लपट उसकी तुम्हे छूले
कि वे चिनगारिया जो
युगो से सोयी हुई हैं सद सासो मे तुम्हारी
आज फिर जग जाय
इसलिए मुझसे बचो
    ओ वतमान को ज्यो का त्यो स्वीकार
    जिन्दगी जी लेने की बात सोचने वालो !
आजकल विष बाटता हूँ मैं !!

एक हिन्दुस्तानी लड़की, अपने मन से

सुन रे मेरे मन !
इतना मत तन
पहले इधर देख
फिर करना मीन-मेख
सुन, यह है तेरा पति
इसके सिवा नहीं तेरी गति

इसको कर प्यार
अपने को मार
हिम्मत न हार
फिर कोशिश कर एक बार
आखिर इसी से काम
या करेगी अपने पुरखों का नाम ?

देख, अपने देश का तो ढंग ही यही है
सदा से यही रीति चलती रही है
कि पहले किसी से भी शादी करो
फिर अपने जो हिस्से आये, उसी पर मरो
तू भी मरना सीख
तुझसे मैं मांगती हूँ भीख
आखिर इस विचारे में कौनसी बुराई है
मां-बाप ने देख सुनकर ही आखिर तुझे ब्याही है
फिर औरत को किसी न किसी मर्द से तो झुकना ही पड़ता है
तब किसी से झुकने में क्या फर्क पड़ता है
सोचले अब तू बस इसकी परिणीता है
यह राम है तेरा, तो तू इसकी सीता है
पर यह राम हो या न हो, तुझे सीता रहना है
इसका ही होकर रहना है, मगर सीता रहना है
भले घर की लड़कियों का यही है ढंग
जैसे काली कामरी चढ़े न दूजो रंग।

लोगो का विश्वास

अब तक मैंने बुना हृदय मे
बस सपनो का ताना बाना
अब तक मेरा काम रहा है
लोगों तक सपने पहुँचाना
अब उसके अनुकूल सत्य का जी न सका तो
लोगों का विश्वास सपन से उठ जायेगा।

अब तक केवल लिखने में ही

रणजीत

मैंने अपनी शक्ति लगायी
दुनिया के बेहतर ढाचे मे
लोगो की आसक्ति जगायी
अब यदि उनके सघर्षों में उतर न पाया
लोगो का विश्वास कलम से उठ जायेगा !

एक विराट् पवित्रता

ठहरी रहो,
अपनी इन मृणाली बाहों से मुझे घेर कर इसी तरह
ठहरी रहो।
जब तक कि तुम्हारे रोम रोम से यह अज्ञात सत्य साँसें
ले रहा है
जब तक तुम्हारी आँखों में उसकी नीली गहराइयाँ हैं
तुम्हारे गाल उसकी रोशनी से से रोशन हैं
तुम्हारे होंठों पर उसका स्वाद है

तब तक मुझे घेरे रहो
उस विराट पवित्रता से मुझे छुए रहो
क्योंकि कुछ ही क्षण बाद
अपने आप तुम्हारा आलिंगन ढीला पड जाएगा
और हम दो टकराकर कौंध चुके बादलों की तरह
अपने अपने घायल अस्तित्व को देख रहे होंगे
और सोच रहे होंगे
कि क्यों अब हमारी निकटता बिजली नहीं चमकाती
और तब
तुम्हारे चेहरे पर उभरती हुई मुस्कान में मुझे बनावट नजर आएगी
और मेरे लहजे मे निकलती हुई अभिमान की गंध
तुम्हें असह्य लगने लगेगी
हम फिर स्वयम के छोटे-छोटे घेरो में घिर कर रह जाएंगे
फिर तुम मेरे लिए किये गये अपने त्यागों का हिसाब करने लगोगी
और मैं तुम्हारे लिए सुनी हुई प्रताडनाएं गिनने लगूंगा
तुम मेरे किसी दोस्त की नकल निकालोगी
और मैं तुम्हारी किसी सहेली का मजाक उडाऊंगा,
फिर वही लेन देन
हिसाब किताब
शिकवा शिकायत
शायद हमारी क्षुद्र आत्माएं
उस विराट को अधिक देर तक धारे नहीं रह सकतीं
इसलिए जब तक तुम्हारे स्पर्श में निरीह के फूल खिले हुए हैं
तुम्हारे बैनों में रातरानी की खुशबू है

तुम्हारी सासो में इंसानियत की गर्मी है
तब तक ठहरी रहो,
अपनी इन मृणाली बाहो से मुझे इसी तरह घेर कर
ठहरी रहो !

लाल ख़ून

बहुत ठण्डी होती हैं हालात की बर्फानी पर्तें
लाल ख़ून भी तो लेकिन कम गम नहीं होता !

ये सपने : ये प्रेत

मुझे घेर कर खड़े हुए हैं मेरे सपने !
क्षण भर के भी लिए चैन की सांस नहीं लेने देते हैं—
दामन पकड़े अड़े हुए हैं मेरे सपने !
मैं इनसे अभिभूत जुल्म के अंगारों पर चल लेता हूं
मैं इनमें आविष्ट आंधियां-तूफानों में पल लेता हूं
प्रेतों से ये मेरे सिर पर चढ़े हुए हैं मेरे सपने !
मुझे घेर कर खड़े हुए हैं मेरे सपने !!

सपने : जिनको जन्म दिया था मैंने

दुनिया की तीखी नजरों से छिपा बचाकर
पाला था
पोसा था
बड़ा किया था
अब मुझसे आकर मांगते
जीने का
सच बनने का अधिकार मांगते
जैसे किसी गरीबिन मां के भूखे बच्चे
उसका आंचल खींच-खींच कर
माग रहे हों उससे रोटी—
ऐसे पीछे पड़े हुए हैं मेरे सपने !
मुझे घेर कर खड़े हुए हैं मेरे सपने !
क्षण भर को भी लिए चैन की सांस नहीं लेने देते हैं—
दामन पकड़े खड़े हुए हैं मेरे सपने !!

कभी कभी मेरा हारा मन
दुनिया के सारे नियमों से समझौता कर
सीधे सादे ढर्रे से जीवन जीने की
बात सोच लेता है, लेकिन
ये अबाध जनवादी सपने
संघर्षों के आदी सपने
सब समझौते तुड़वाते हैं
और मुझे हर जोर जुल्म के
बेइन्साफी के खिलाफ ये
बांह उठा कर लड़वाते हैं—
ऐसे पीछे पड़े हुए हैं मेरे सपने !

मुझे घेर कर खडे हुए हैं मेरे सपने !
क्षण भर के भी लिए चन की सांस नहीं लेने देते हैं—
दामन पकडे अडे हुए हैं मेरे सपने ! !

प्यार : चार अस्वीकृतियां

प्यार कोई किसी अखबार का मैट्रीमोनियल ऐडवरटाइज़-
मैंट वाला कॉलम तो नहीं है
कि उसके माध्यम से
किसी अच्छे से पति या किसी अच्छी सी पत्नी की खोज
की जाय
और अपनी सफलता पर बधाइयां पाई जाय ।

प्यार कोई व्यावसायिक फर्म या फैक्ट्री तो नहीं है

कि उसके शेयर खरीदने से पहले
उसके नफे नुकसान का पूरा अंदाज लगा लिया जाय
और अपनी बुद्धिमानी पर गर्व किया जाय ।

प्यार कोई प्रतिष्ठा के लिए लड़ी जाने वाली कुश्ती तो
नहीं है
कि अपने स्टेटस के पहलवान से ही लड़ी जाय
और उसकी हार पर मिठाइयां बांटी जाय ।

प्यार कोई किसी प्रतियोगिता का प्रथम पुरस्कार तो
नहीं है
कि सबसे ज्यादा नम्बर पाने वाले को ही दिया जाय
और अपनी न्यायशीलता पर तालियां सुनी जाय ।

मेरे आसपास के लोग

मेरे आसपास बड़े सभ्य लोग रहते हैं।
वे, जो पानी को तो कई कई बार छानते हैं,
पर जहरीली परम्पराओं को आँखें मीच कर पी जाते हैं।
रोटी की पवित्रता का तो पूरा पूरा ध्यान रखते हैं,
पर सिद्धांत जूठे ही खा जाते हैं।
सब्जी तो हमेशा ताजी ही काम में लाते हैं,
पर आदर्श बासी ही अपना लेते हैं।
कपड़े तो _द मिलवा कर ही पहनते हैं

-निह न का द

पर विचार रेडीमेड ही खरीद लेते हैं !
मकान तो अपना बनवाया हुआ ही पसन्द करते हैं,
पर विश्वास किराये पर लेकर ही काम चला लेते हैं !
फिल्म तो अपनी पसन्द की ही देखते हैं,
पर शादी अपने मा बाप की पसन्द से ही कर लेते हैं !
कितने सभ्य हैं मेरे आसपास के लोग !!

एक गधे की सीख

देख, बेटा, देख !
जरा जमीन पर पाँव टेक
इतना मत उछल, हिनाके मत ज्यादा
अपनी औकात तो देख, जरा होश में तो आ
देख, दुनिया में दो तरह के लोग होते हैं
कुछ का बोझ होता है, कुछ ढोते हैं
ढोने वाले कुल में तूने जन्म लिया है
ढोने वाली अम्मा का दूध पिया है

दूध की इस शान को लजाना न सीख
गरदन को ऊंची उठाना न सीख
सुन, मेरी बात जरा ध्यान से तू सुन
सहनशीलता गधों का सबसे बडा गुन
अपने पुरखे हमेशा से वफादार रहे हैं
त्याग और तपस्या के भंडार रहे हैं
पुरखों की परम्परा को तोड मत बेटा
अपने फर्जों से मुख मोड मत बेटा।
मत देख पराई हलुवा पूडी मत ललचा तू जी
रूखी सूखी खाय के ठण्डा पानी पी ।

रणजीत

माध्यम

मैं माध्यम हूँ !
मैं उन सबको भटकती हुई आत्माओं का माध्यम हूँ
जो अधूरे और अतृप्त मर गये
मेरे कंठ में उनके स्वर हैं
जिन्होंने सारी जिन्दगी निःशब्द गुज़ार दी
मेरी कलम में उनकी आग है
जो अपनी आग अपने दिलों में दबाए हुए ही चले गए
मेरे गीतों में उनका विद्रोह है

जिनकी गर्दनें उठने से पहले ही झुका दी गईं
यह मैं नहीं उनकी आत्माएं बोल रही हैं।

जब मैं बोलने के लिए अपना मुंह खोलता हूं
कुछ भटकते हुए शब्द मेरे आसपास मंडराने लगते हैं
ये उस अंग्रेज लेखक क्रिस्टोफर काडवेल के शब्द हैं
जिसने स्पेन की आजादी की लड़ाई में अपनी जिन्दगी दे
दी थी
ये इंटरनेशनल ब्रिगेड के उन सैकड़ों क्रांतिकारी सैनिकों के
शब्द हैं
जिन्हें भाप बनाकर उड़ाने के लिए
नाजी गेस्टापो के हाथों सौंप दिया गया था
ये पोलेण्ड के उन हजारों मूक यहूदियों के शब्द हैं
जिन्हें जिन्दा दफनाने के लिए
खुद उन्हीं के हाथों से कब्रें खुदवाई गयी थीं
आसविट्ज के गैसचेम्बरों में घुटी हुई ये लाखों आवाजें
५६ अब खुले आसमान में बिखर कर लोगों के कानों तक
पहुंचना चाहती हैं।

मैं माध्यम हूं।
जब मैं लिखने के लिए अपनी कलम उठाता हूं
एक आग मेरी कलम को घेर कर खड़ी हो जाती है
यह आग अल्जीरिया की उस जवान विद्रोहिणी जमीला
की आग है
अमानुषिक अत्याचारों के बल पर
जिससे ये सब अपराध स्वीकार कराए गये हैं
जो उसने कभी नहीं किये

यह सीक्रेट आर्मी की शिकार उन हजारों-अल्जीरियाई
मशालों की आग है

-जिनकी जिन्दगियां
फ्रांसिसी साम्राज्यवादियों की नजरों में
बोर्ड पर लिखी हुई संख्याओं से ज्यादा कीमत नहीं रखतीं
यह आग चाहती है कि मैं इसे कागजों के पृष्ठों पर उता-
रता जाऊं
और कागजों के पृष्ठों से यह लोगों के दिलों तक पहुँचती
जाय !

मैं माध्यम हूँ
टूटी हुई आवाजों और दबी हुई चिनगारियों का माध्यम !

जब मैं अपना साज संभालता हूँ
एक दर्द मेरे आसपास आकर जमने लगता है
यह कांगो के बेताज बादशाह लुमुम्बा का दर्द है
जो मेरे साज को उदास और मेरी आवाज को गमगीन
बना रहा है
यह कांगो की आजादी के उस सिपाही का दर्द है
जिसे निहत्था करके गोली मार दी गयी
और कांगो के जमे हुए खून में एक उबाल भी न आया !

मैं जब अपनी कलम उठाता हूँ
कुछ घायल और बेतरतीब शक्लों को अपने आसपास
मंडराते हुए पाता हूँ
ये तेलंगाना के उन बूढ़े किसान के सपने हैं
जिसने जमीनों पर जोतने वालों का अधिकार चाहा था
और इसके इनाम में जिसके हाथ-पैर काट दिये गये थे

ये उन एक सौ आठ बागी किसानों की पलकों में सपने हैं।
जिन्होंने अपनी पकती हुई फसलों और जवान होती हुई बेटियों को
लुटेरे हाथों से बचाने के लिए
बन्दूकें उठा ली थीं
और जिनकी पलकें फांसी के तख्ते पर लाकर मूंद दी गईं

ये तेलंगाना के उस नन्हे से विद्रोही गांव की
सैकड़ों स्त्रियों और बच्चों के सपने हैं
जिसे हिन्दुस्तानी सरकार के बहादुर सिपाहियों ने घेर कर आग लगा दी थी

ये सपने चाहते हैं
कि मैं इन्हें दुनिया के एक एक इन्सान की पलकों तक पहुँचा दूं।

मैं माध्यम हूँ
बेताब दर्दों और घायल सपनों का माध्यम।

जब मैं सोचना चाहता हूँ
एक भयानक पागलपन मेरे दिमाग को चारों ओर से जकड़ लेता है

यह उस अमेरिकी पायलेट का पागलपन है
जिसे हिरोशिमा पर एटमबम गिराने का आदेश दिया गया था

और जो इस भीषण नरमेध का प्रायश्चित्त
अमेरिकी पागलखाना में कर रहा है
यह पागलपन चाहता है
कि मैं इसे दुनिया के हर जंगबाज नेता

और उसके हर वफादार सिपाही के दिमाग तक पहुँचा दूं।

मैं माध्यम हूँ
और जब ये शब्द, यह आग और ये सपने मेरे आसपास
मडराते हैं
मैं अपने क्षुद्र से व्यक्तित्व को भूल जाता हूँ
और मुझे लगता है कि मैं ही वह अंग्रेज लेखक हूँ
अल्जीरिया जमीला हूँ
मैं ही रबर की तरह जमी हुई कागो की आत्मा को
हिलाने की कोशिश करने वाला लुमुम्बा हूँ
आग में जिन्दा जलती हुई स्त्रियों और बच्चों की ये दर्द-
नाक चीखें
मेरे ही भीतर से उठ रही हैं
मैं ही वह पवित्र पागलपन से आक्रांत अमेरिकी पायलेट हूँ
ये सब मेरे ही भीतर जी रहे हैं
मैं माध्यम हूँ।

प्रोमेथ्यूस इतिहास की राह पर

पुराणों में एक प्रोमेथ्यूस था
जिसने स्वर्ग से आग चुरा कर मनुष्य को दी थी
और देवताओं के राजा जुपीटर ने उसे एक चट्टान से
बंधवा दिया था

इतिहास में भी प्रोमेथ्यूस होते हैं
लेकिन इतिहास में आग चुराना और चट्टान से बंधना
जरूरी नहीं है

रणजीत

क्योंकि बहुत से प्रोमेथ्यूस तो आग चुराते नहीं, छीनते हैं
जुपीटर के द्वारा बन्दी नहीं बनाये जाते, उसे हरा कर भगा देते हैं
और आग के साथ ही साथ जुपीटर के महलों के भी मालिक बन जाते हैं
तब उन्हें आग धरती पर ले जाकर मनुष्यों को देने की जरूरत नहीं रहती
वे खुद स्वर्ग में ही आकर रहने लगते हैं
और आग
फिर इन नये जुपीटरों के महलों में बन्द छटपटाती रहती है
और धरती
—अंधेरे में भटकती हुई व्याकुल धरती—
फिर किसी नये प्रोमेथ्यूस का इन्तजार करती रहती है।

एक बागी की स्वीकारोक्तियां

नफरत है मुझे अपने देश से
जहां बचपन भीख मांगते हुए जवान होता है
और जवानी गुलामी करते-करते बुढ़िया जाती है !

जहां अन्याय को ही नहीं
न्याय को भी अपनी स्थापना के लिए
भिखारियों की जरूरत होती है
और झूठ ही नहीं

सच भी रोटरी मशीनों और लाउडस्पीकरों का मुहताज है
बेईमानी को ही नहीं
ईमानदारी को भी अपनी रक्षा के लिए
पैसों की ताकत का सहारा लेना पड़ता है !

जहां क्रांति की योजनाओं जैसे उल्लास भरे प्रारम्भ वाले
प्यार का अन्त
किसी निकटतम साथी के मृत्युदंड का सा अवसादपूर्ण
होता है
और भोर के टटके गुलाब की सी ताजा सुकुमार सुन्दरता
सीलन-भरी अंधेरी कोठरियों में घुट घुट कर बुझ जाती है !

जहां पुस्तक-गर्भा अंगुलियां
बर्तन मांज-मांज कर घिस जाती हैं
और स्पुतनिक बना सकने वाले दिमाग
पत्थर ढो-ढो कर भोंडे हो जाते हैं !
जहां पृथ्वी की परिक्रमाएं कर सकने वाली वेलांतिनाएं
भारी जेबों और ऊंची कुर्सियों के आसपास भिनभिनाने
वाली
कीलरें बन कर रह जाती हैं !

नफरत है मुझे अपने धर्म से !
मेरा धर्म पत्थरों और पोथियों के आदेशों का धर्म है
फटे हुए कानों और नुचे हुए केशों का धर्म है
जिन्दा जलायी हुई सतियां और सठियाए हुए संन्यासियों
का धर्म है
मुझे नफरत है अपने मठों और मंदिरों से

जहा आतक और अन्नान को मूर्तियो मे ढाल कर पूजा
जाता है।
नफरत है मुझे मिमियाते हुए होठो और जुडते हुए हाथो से
नफरत है मुझे घिसती हुई नाको और झुकते हुए माथो से।
नफरत है मुझे अपनी सरकार से
जिसने रोटियो और भूखे हाथो के बीच पहरे लगा रक्खे हैं
कपडो और ठिठुरते हुए शरीरो के बीच
लक्ष्मण रेखाए खींच रक्खी हैं
खाली मकानो और बेघरबार लोगो के बीच
दीवारे खडी कर रक्खी है
रोगियो और दवाओ के बीच कटीले तार लगा रक्खे हैं
और किताबो और लोगो की आखो के बीच
अन्धेरे फला रक्खे हैं।

हा, मैं बागी हूँ
मुझे अपने देश, अपने धर्म और अपनी सरकार से नफरत है
मैं बागी हूँ क्योंकि मुझे अपने लोगो से प्यार है
मैं इनके चेहरो पर बहार, इनके आगनो म त्योहार देखना
चाहता हूँ
मैं बागी हूँ, क्योंकि मुझे उन जजीरो से नफरत है
जो इन्हे जकडे हुए हैं,
उन सीमाओ से नफरत है, जो इन्हे बाटे हुए ह।

समस्या

दर्द बड़ा है
गीत हैं छोटे
पूरा दर्द नहीं कह पाते ।
प्यार बड़ा है
मीत हैं छोटे
पूरा प्यार नहीं सह पाते ।

मॅरेलिन मनरो का अन्तिम पत्र

सुनो,
ओ दुनिया के सबसे सम्पन्न और सबसे सभ्य देश के भद्र
नागरिको,
सुनो !
मैं जो अब तक सिर्फ तुम्हारे एयर-कंडीशण्ड टाकीजों
के पर्दों
या फिल्मी अखबारों के रंगीन पृष्ठों पर से ही बोलती
रही हूँ

मैं जो अबतक ओढे हुए व्यक्तित्व ही तुम्हारे सामने रखती
रही हूँ
निर्माताओ निर्देशको-सवादलेखको के शब्द ही
तुम्हारे सामने दुहराती रही हूँ
आज तुम्हे अपने ही दिल और दिमाग से निकले हुए
अपने ही शब्दों से सबोधित कर रही हूँ।

सुनो, ओ अमेरिका के कला ममज्ञ फिल्म निर्माताओ,
निर्देशको, आलोचको और दर्शको!
तुमने मुझे हमेशा नींद की गोलिया दी हैं!
मेरी चेतना, मेरे विवेक, मेरे अहसास को सुलाया है
मेरे नारीत्व, मेरे व्यक्तित्व, मेरी आत्मा का होश छीना है
और मेरी भूख, मेरी प्यास, मेरे स्तनो और मेरे नितम्बो
को उभारा है
मेरे होठो के रग और मेरे बक बेलेंस को शोखी दी है—
मेरे शरीर को जगाया है!
इस शरीर को, जिसने अब मुझे पूरी तरह से लील लिया है
यह शरीर जो अब मेरे व्यक्तित्व का एक अग नहीं,
उसका दुश्मन बन गया है!
और आज मैं इसे उन्हीं नींद की गोलियो से सुला दूगी
जिनसे तुमने मेरी आत्मा को सुलाया था!

ओ मेरे अपने देश और दूसरे देशो के मेरे प्रशसको!
मेरे सौंदर्य के ग्राहको! मेरे अभिनय के सराहको!
मेरी तारीफ मे छपी हुई तुम्हारे अखबारों की सतरे
तुम्हारे कलेण्डरों मे टकी हुई मेरे नगे शरीर की तस्वीरे
मेरे नाम पर भरी हुई तुम्हारी आहें

मेरे उभारो पर भिनभिनाती हुई तुम्हारी आखें
मेरे होठो की ओर ढके हुए तुम्हारे चुम्बन—
ये सब मेरे आसपास इस तरह मडरा रहे हैं
जसे किसी गन्दे अधसूखे नाले के कीचड मे पडी
किसी इन्सान की लाश के आसपास
घिनौनी मक्खिया, जौंकें और केंकडे मडरा रहे हो
और यह सब मेरे लिए असह्य है !

ओ व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का ढिढोरा पीटने वाले मेरे देश
के रहबरो !
मैं राजनीति नही जानती
समाज और व्यक्ति के उलझे हुए सम्बन्धो को नहीं समझती
पर एक सीधी सी बात पूछती हूँ
कि उन सब के लिए
तुम्हारी इस व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का क्या मतलब है
जिन्हे तुमने व्यक्ति बनने का मौका ही नही दिया ।
तुमने मुझे मात्र एक शरीर बना कर रक्खा ।
एक शरीर जो खूबसूरत है, जवान है, भोग्य है
एक शरीर जो किसी की मा नहीं, बहिन नहीं, बेटी नहीं
किसी की पत्नी, प्रेयसी, मित्र कुछ भी नहीं है
महज एक शरीर—
सतीस तेईस का एक माडल !

मेरी टेबिल पर कपडे के दो खिलौने पडे हैं
एक बाघ है और एक ममना
कल ही मं इन्हे खरीद कर लाई हूँ
कितना भयानक, कितना खूखार है यह बाघ

ग्रौर कितना मासूम, कितना निरीह है यह मेमना !
पता नहीं क्यों यह विचार मेरा पीछा नहीं छोड़ रहा है।
कि यह मेमना मैं ही हूँ
ग्रौर यह वाघ ?
— इस मासूम मेमने को निगलने वाला यह बाघ ?—
मैं सही शब्द चुनना नहीं जानती
शायद यह तुम्हारा फिल्म उद्योग है
शायद तुम्हारे बाजार ग्रौर वक्त हैं
शायद   शायद तुम्हारे समाज का यह ढाँचा है !

रात उदास है
ग्रौर खिड़कियों पर जमती हुई बर्फ की फुहार में
किसी रहस्यपूर्ण षड्यन्त्र की फुसफुसाहट है
मेरा सिर नींद से भारी हो रहा है
ग्रब मेरे पास सिर्फ एक गोली बची है
ग्राखिरी ग्रौर छत्तीसवीं गोली !
ग्रौर इसके बाद मैं गहरी नींद सो जाऊँगी
ऐसी नींद, जिससे मुझे कोई न जगा सकेगा !

मैं तुम सब की ग्राभारी हूँ, ग्रो मेरे देश वासियो !
मैंने इस छोटे से जीवन में बहुत कुछ पाया है
पैसा, प्यार, शोहरत, इज्जत सब कुछ
दस लाख डालर का बक-बैलेंस, बेवरली हिल्स पर एक
शानदार कोठी,
दर्जनों कारें ग्रौर लाखों लोगों के ग्राकर्षण का केन्द्र
यह शरीर
मैंने ग्रपने जीवन में बहुत कुछ पाया है

सिर्फ एक छोटी सी इच्छा शेष है
कि कोई बिल्कुल अजनबी व्यक्ति
बिना मेरे बैंक बैलेंस और शरीरिक उभारों को
अपनी आँखों से टटोले हुए
बिना मेरी सुन्दरता और शोहरत से प्रभावित हुए
बिना जाने कि मैं हालीवुड की रानी मनरो हूँ
मुझे एक आइसक्रीम खिलाता
या सहज स्नेह से सिर्फ मेरे गाल थपथपा देता, बस !
अब मैं सो रही हूँ !!

शब्द-सैनिको से

जाओ!
ओ मेरे शब्दों के मुक्ति सैनिको, जाओ!
जिन जिन के मन का देश अभी तक है गुलाम
जो एकछत्र सम्राट स्वार्थ के शासन में पिस रहे अभी हैं
सुबह-शाम
घेरे हैं जिनको रूढ़ि-ग्रस्त चिंतन की ऊंची दीवार
जो ढोते युग के संस्कारों की सरमायेदारी का शोषण
सहते हैं बेरोकथाम

हम जो तिल तिल कर पिस रहे हैं
जहर के प्याले पी रहे हैं, फासियो पर लटक रहे हैं
रेल गाड़ियो के नीचे आकर कट रहे हैं,
शहीद हो रहे हैं
लेकिन हमारी शहादतो को
किसी आदर्श तक पहुँचने ही नहीं दिया जाता—
हम सिर्फ अपने पेट के लिए ही शहीद होना पड रहा है !

हम जो लड रहे हैं, सघर्ष कर रहे हैं
लेकिन हमारे सघर्ष
किसी महान् उद्देश्य को पकड ही नहीं पाते—
हमें महज अपनी रोजी के लिए ही लडना पड रहा है !
हम ऐसे धर्म योद्धा हैं जिनके पास कोई सलीब नहीं है !
किसी सलीब के लिए तडपती हुई
हमारी तपस्याओ, लडाइयो और शहादतों का दर्द
क्या कोई समझेगा ?

सिर्फ एक शब्द नहीं

'कामरेड !'
सिर्फ एक शब्द नहीं
बिजली की लाखों रोशनियों को जला देने वाला एक
स्विच है

जिसे दबाते ही
रंग बिरंगी रोशनियों की एक कतार जगमगा उठती है
एक स्विच जो वाल्ट व्हिटमन को मायकोवस्की से
और पाब्लो नेरुदा को नाजिम हिक्मत से मिला देता है,

मैक्सिम गोर्की, हावर्ड फास्ट और यशपाल के बीच
एक ही प्रकाश रेखा खींच देता है !

'कामरेड !'
सिर्फ एक स्विच नहीं, एक चुम्बन है
एक चुम्बन
जो दो इन्सानों के बीच की तमाम दूरियों को एक ही क्षण
में पट देता है
और वे इसके उच्चारण के साथ ही एक दूसरे से यों घुल-
मिल जाते हैं
जैसे वे युगों से परिचित दो घनिष्ठ मित्र हों
एक चुम्बन जो कांगो की नीग्रो मजदूरिन
और हिन्दुस्तान के अछूत मेहतर को
एक ही क्षण में लेनिन के साथ खड़ा कर देता है !
एक अदना से अदना इन्सान को इतिहास बनाने के
महान उत्तरदायित्व से गौरवान्वित कर देता है !

'कामरेड !'
सिर्फ एक चुम्बन नहीं, एक मंत्र है !
जो बोलने वाले और सुनने वाले दोनों को पवित्र कर
जाता है ।
एक मंत्र, जो अलग अलग देशों, वर्गों और नस्लों के
करोड़ों लोगों को
एक ही सूत्र में पिरो जाता है ।
एक रहस्यमय मंत्र
जो इन्सान की आजादी, बराबरी और भाईचारे के लिए
कुरबान होने वाले लाखों शहीदों के दरवाजे

सबके लिये खोल देता है
और साधारण से साधारण व्यक्ति उनकी महानता से हाथ
मिला सकता है।

'कामरेड !'
एक जलती हुई स्निग्ध लौ है
जो एक दिल में दिये से निकलती है
और हजारों दिलों को दीप्त कर जाती है,
एक तराशा हुआ हीरा है
जिसकी सख्त चमक में सैकड़ों सपने झिलमिलाते हैं,
विषमता और भेदभाव के तपते रेगिस्तान का एक मरु
दीप है
जहां आ कर
जुल्म और अन्याय की आग में जलते हुए राहगीर
राहत की सांस लेते हैं,
एक दूसरे का हौसला बढ़ाते हैं !

बर्फ पिघलने के बाद भी

कैसे फिराते हो तुम मेरे शरीर पर अपनी अंगुलियां, प्राण !
कौन सा जादू भरा है इनमें
कि कस-कस जाते हैं
मेरे शरीर के सितार की सारी नसों के तार
थिरक उठता है
मेरी नसों में शताब्दियों से सोया हुआ कोई आदिम संगीत
समन्दर की अदम्य लहरों की तरह

रणधीर

मंत्रमुग्ध सा तुम्हारी अ गुलियों के इशारों पर
श्रौर जाग-जाग उठती हैं
मेरे लहू का अथाह गहराइयों में बेहोश
प्रागैतिहासिक युग की हजारों कविताए।

कौन सा दव, कौन सी आग भरी है तुम्हारी इन
अ गुलियों में प्राण!

जो सैकड़ों रेगिस्तानों की व्याकुल प्यास
मेरे रोम-रोम में रस जाती है
कि जब मेरे अस्तित्व की जड़ रुपरेखाए
चरम-सुख के तरल बेसुध क्षणों में घुलने लगती हैं
श्रौर मैं तुम्हारी बाहों की अभय देती हुई शाखाओं में
अपनी गरदन झुलाए हुए
एक अलसाई हुई लता की तरह खो जाती हूँ
तब भी मुझे लगता है
कि अनछुयी घाटियों श्रौर पहाड़ों की क्वारी बर्फ
पर पड़े
पहले पद चिन्हों की तरह
सदियों तक मौन सहती रहूँगी अपने वक्ष पर
सजो कर रखूगी
तुम्हारी अ गुलियों से लिखे इन घावों को
बर्फ के पिघल जाने के बाद भी।

इतिहास का न्याय

(त्रात्स्की की पुस्तक 'रूसीक्रान्ति
का इतिहास' पढ़ते हुए)

वे सब जो विजयी होकर लौटे हैं
जिन्दा बचे हैं
सच्चे हैं, देशभक्त हैं, महापुरुष हैं !

वे सब [illegible] हार गये
[illegible]

रणजीत

झूठे थे, गद्दार थे, दुष्ट थे !

नीति कहती है
सत्य की हमेशा जीत होती है।
इतिहास कहता है
जो जीतता है, वह सत्य कहा जाता है !

सवेदनाओ के क्षितिज

तुम ठीक कहती हो प्राण !
सचमुच मैं तुम्हें पूरे दिल से प्यार नहीं करता
पर मैं पूरा दिल कहा से लाऊ ?
मैं तुम्हें कैसे बताऊ
कि जब मेरे दिल का एक हिस्सा
तुम्हारे प्यार मे खोया हुआ होता है
उसका दूसरा हिस्सा
एक शत्रुतापूर्ण तूफानी समुद्र में

रणबीर

अपनी मंजिल की ओर बढते जा रहे
एक छोटे से जहाज के साथ मंडरा रहा होता है
और वह जहाज है
साम्राज्यवाद के समुद्र में नहीं डूबने का संकल्प लिये
हुए क्यूबा।
और जब मैं तुम्हे अपनी गोद में लिटाये हुए
तुम्हारे केशों में अपनी अंगुलियां फिरा रहा होता हूँ
मेरे विचार हाथो मे बन्दूकें लिये
वियतनाम के घने जंगलो मे घूम रहे होते हैं
और अमेरिका हवाई जहाजो से बरसाये जा रहे
जहरीले बमो की किरचें
मेरे चेहरे को लहू लुहान कर जाती हैं!
मैं तुम्हे पूरे दिल से प्यार करूँ कैसे ?
कि जब मेरे कन्धे पर सिर रख कर तुम सो रही होती हो
और कहती हो
कि इस तरह तुम्हारे कन्धे पर सिर रख कर सोना मुझे
इतना अच्छा लगता है
कि चाहती हूँ कि जन्म जन्मान्तर तक इसी तरह पडी रहूँ
तभी मेरी आंखों से सुदूर अतीत का एक दृश्य कौंध
जाती ह
हावर्ड फास्ट के उस आदि विद्रोही स्पार्टकस का दृश्य
और वह हजार गुलामों की लाशें मेरे दिमाग म घिर
जाती है
और तुम्हार मासल गालो को छूती हुई मेरी अंगुलियो मे
राइफल के बोल्ट का एक कठोर स्पर्श जागने लगता है!
तुम ठीक कहती हो
सचमुच मैं तुम्हे कभी पूरे दिल से प्यार नहीं कर पाता

लेकिन प्यार ही क्यों
कोई खुशी, कोई गम भी तो मैं पूरे दिल से नहीं मना पाता
मेरी हर खुशी पर सैकड़ों अवसादों के साये हैं
और मेरे हर अवसाद की धारा में सैकड़ों आशाओं की खिड़कियां

कि जिस दिन मैं 'राहुल' के प्रकाशन की खुशी मना रहा था
साम्राज्यवाद का जूआ तोड़ फेंकने वाले दो पड़ोसी देशों की सेनाएं
हिमालय की बर्फ को इन्सानी खून से रंग रहीं थीं।
कि अपनी नौकरी छूटने की खबर की उदासी
मैंने नाजिम हिकमत की कविता 'तुम्हारे हाथ और यह झूठ' से काटी थी
और कई महीनों की बेकारी और भटकन के बाद
जब मुझे फिर काम मिला
अल्जीरिया के स्वतंत्रता आंदोलन को
सीक्रेट आर्मी आरगेनाइजेशन की हत्याएं आतंकित कर रही थीं।

और उस दिवाली की रात तुम्हें याद है ना ?
जब हम मोमबत्तियों की कतारों में खिले हुए बच्चों की तरह खुश हो हो कर
फुलझड़ियां और पटाखे छोड़ रहे थे
मैं एकाएक उदास हो उठा था
क्योंकि एक पटाखे की आवाज मुझे उन गोलियों की

आवाज के करीब ले गयी
जिनसे बगदाद की सड़कों पर मेरे अरमानों के सोने दागे
गये थे।

तुम ठीक कहते हो कि मैं
लेकिन मैं क्या करूँ ?
मेरी ज्ञान ने मेरी संवेदनाओं के क्षितिज कितने फैला
दिये हैं
कि दुनिया के कोने कोने में मैं अपने दोस्तों और दुश्मनों
को देख रहा हूँ
मेरे दोस्त जो मेरे दुश्मनों से एक निर्णायक लड़ाई में जूझ
रहे हैं
और पेरिस के किसी चौराहे पर फहरता हुआ मजलूमों
का एक बुलन्द इरादा
जंजीबार में उठी हुई मुट्ठियों का एक जुलूस
न्यासा में रंगभेद के खिलाफ कड़कता हुआ
एक नारा
मुझे इस तरह रोमांचित कर जाता है
जिस तरह महीनों की जुदाई के बाद तुम्हारा पहला
आलिंगन।
और टोकियो में एक मजबूरन टूटी हुई हड़ताल
लियोपोल्डविल में एक गिरफ्तारी
सिंगापुर में झुकी हुई गर्दनों का एक वापस लिया
हुआ आन्दोलन
मेरे दिल पर अवसाद का इतना बोझ रख जाता है
कि मैं घंटों तक किसी से बात भी नहीं कर पाता।

भूकम्प

तेजी से बढ रहा समय है
और कलेण्डर पिछड रहे हैं
काफी आगे निकल गया है
जल्दी जल्दी कदम उठाने वाला नया वसंत
और अब पीछे-पीछे हाँफ रही है भारी कदम वसंत
पंचमी।
आंक नहीं पाता यह तारीखों-माहों-वर्षों का ढांचा
समय चाल को ठीक ठीक से

ए चौथ

सोमवार को अभी कलेण्डर सत्रह ही तारीख बताता
लेकिन वह अट्ठारह, बीस, तीस, तक पहुँच रही है !
ऊपर से ज्यों का त्यों दिखता अण्डे का यह खोल
कि जिसके भीतर का वह जीवन अंकुर
अपनी गति में
खोल की सारी जड़ सीमायें पीछे छोड़ चुका है !
और खोल जो अब तक उसका कवच था
अब जंजीर बन गया।
लेकिन देख रहे जो केवल मात्र खोल की मजबूती को
और नहीं जो बूझ रहे हैं उसके भीतर उगती एक नई
ताकत को
जिस दिन वह टूटेगा
बहुत चौंक जायेंगे
घबरा कर पूछेंगे
एकाएक अचानक यह भूकम्प कहाँ से आया ?

आइकेरस

मेरे नये और नन्हे साथियो !
तुम जो अपने अपने कीट द्वीपों के कैदखानों से
उड़ानें भरने के लिए तैयार खड़े हो,
और मुझसे मेरे अनुभव पूछ रहे हो
मैं निर्णय नहीं कर पा रहा हूँ
कि तुम्हें क्या बताऊँ ?

कभी सोचता हूँ

मैं तुम्हें बताऊँ
कि कितने कमज़ोर होते हैं मानवीय साहस के पंख
और कितना ऊँचा है यह आकाश।
कितनी गर्म होती हैं यथार्थ के सूर्य की किरणें
और कितना द्रवणशील होता है वह आदर्शों का मोम
जिससे हम अपने पंख अपने शरीरों से जोड़ते हैं।

कभी सोचता हूँ कि तुम्हें बताऊँ
कि हर ऊँची उड़ान का अन्त
पिघले हुए मोम और टूटे हुए डैनों में होता है
कि वे बाहें
जो अपनी सीमाओं में आकाश को घेर लेना चाहती हैं
गिर कर समन्दर में बिखर जाती हैं।
लेकिन फिर सोचता हूँ
कि यदि यह सब कुछ निश्चित भी हो
यदि मोम का पिघलना और पंखों का टूटना
एक सार्वभौम सत्य भी हो
तो भी मुझे क्या अधिकार है
तुम्हारी कसमसाती हुई बाहों को निराश करने का,
तुम्हारे फड़कते हुए डैनों का विश्वास छीनने का।
क्या अधिकार है उस उड़ान के आनन्द से तुम्हें वंचित
रखने का
जो शायद हर परिणाम के बावजूद
ज़िन्दगी की सबसे बड़ी सार्थकता है।

फिर क्या मालूम
शायद तुम्हारे डैने मेरे डैनों से ज़्यादा मज़बूत हों

तुम्हारा सूय उतना प्रचण्ड न हो
तुम्हारा आकाश तुम्हारी उडान के प्रति उतना क्रूर न हो
शायद तुम्हारी बाह
आकाश को अधिक देर तक घेर कर रख सकें !

इसलिए
मेरे नये साथियो !
मेरी शुभकामनाए तुम्हारे साथ हैं
जरा सूरज का ध्यान रख कर उडना !

रजनीश

बहुत शुक्रगुजार हू

बहुत शुक्रगुजार हूँ तेरा, ऐ मेरे वतन कि अभी तक न
भूखा न मरा, पागल न हुआ, जकड़ा न गया हथकड़ियों से।

इतिहास का [illegible]

तुम नहीं हो

तुम नहीं हो
लेकिन कमरे में फैली हुई है तुम्हारे चेहरे की गोरी नाजुक
खुशबू
कि अचानक कोई पुस्तक पढ़ते पढ़ते
अपने चेहरे के बहुत नजदीक महसूस होता है तुम्हारा
चेहरा
और मैं हठात् अपनी गर्दन पर से
तुम्हारी साँसों का गुनगुनाता हुआ स्पर्श पोंछने लगता हूँ।

सत्यपाल

तुम नहीं हो
पर कागज की र ग बिर गी नावों की तरह
तुम्हारे हल्के-फुल्के चुम्बन
मेरे कमरे की हवा म तर रहे हैं।
रोशन दाना की राह में मेर पास चले आते हैं कभी
दो नन्हे-नन्हे सफेद कबूतरों की तरह
पर फडफडाते हुए तुम्हारे आलिगन।
और धीरे से दरवाजे का पदा उठा कर झाक जाते हैं
अक्सर
तुम्हारे शम से लाल, समपण म पिघल हुए इरादे।
तुम नहीं हो
लेकिन तुम्हारे शरीर की ऊष्मा
अब भी मेरे बिस्तर को गम रक्खे हुए है
अब भी बिछा हुआ है मेरी किताबो पर तुम्हारा स्पर्श
बिखरी हुई गुलाब की ताजा पखुरियो की तरह !

इतिहास का दर्द

काश, यह दुनिया कुछ कम उलझन भरी होती !
प्यार का विरोध सिर्फ गलत परम्पराएं ही करतीं या
पैसा ही।

सच की दुश्मनी सिर्फ झूठ से ही होती
उजाले के हथियारों से हथियार भिड़ाए हुए
सिर्फ अंधेरा ही खड़ा होता
और इन्कलाब की खिलाफत सिर्फ प्रतिक्रिया ही करती,
लेकिन यहां तो प्यार के खिलाफ प्यार खड़ा है

रणजीत

एक तरह के प्यार के खिलाफ दूसरी तरह का प्यार
और परम्परा और पैसा उसके पक्ष में भी हैं और विपक्ष
में भी !

उजाले के सामने उजाला तना हुआ है
गुलाबी उजाले के सामने लाल उजाला
और काले अंधेरे का विरोध नीला अंधेरा कर रहा है !
सच के खिलाफ सिर्फ झूठ ही नहीं
एक दूसरा सच भी है
और इन्कलाब के मुकाबले में सिर्फ प्रतिक्रिया ही नहीं
एक दूसरी तरह का इन्कलाब भी खड़ा है !
काश, यह दुनिया कुछ कम जटिल होती
और हमें एक इन्कलाब के लिए दूसरे इन्कलाब की
एक प्यार के लिए दूसरे प्यार की
और एक सच के लिए दूसरे सच की
मुखालिफत के दर्दनाक कर्त्तव्य का बोझ
न उठाना पड़ता !

आंकड़ों का व्यापार

(द्वितीय महायुद्ध सम्बन्धी एक फिल्म
'लांगेस्ट डे' देख कर)

इन्सान नहीं
संख्याएं लड़ रही हैं !
संख्याओं में संख्याएं घिरी हुई हैं
खून से खून नहीं,
सपनों से सपने नहीं,

चाहों से चाहें नहीं
तनख्वाहों से तनख्वाहें भिड़ी हुई हैं!

धड़ धड़ाती हुई मशीनगनों
तोपों और बमवर्षक विमानों का चारा
इन्सान नहीं,
आंकड़े हैं!
दहाइयां, सैकड़े और हजारे!
एक नहीं—
एक जो कोई व्यक्ति है
किसी गांव या नगर का निवासी
किसी घर का चिराग
किसी बाप की लाठी
किसी मां का गुलाब
किसी मासूम तुतलाहट की उम्मीद
किसी बेनींद रात का ख्वाब!

इन्सान नहीं
संख्याएं मर रही हैं,
घायल हो रही हैं,
बढ़ रही हैं, घट रही हैं,
भाग रही हैं, डट रही हैं
संख्याओं की ही जीत है, हार है
युद्ध क्या यह?
सिर्फ आंकड़ों का हेर फेर है,
व्यापार है!

इसका मैं क्या करूं ?

प्रकृति में प्रतिबिम्बित किसी परोक्ष सत्ता में मेरा विश्वास
नहीं
पर मेरे भीतर बसा हुआ यह प्रकृति का मन
इसका मैं क्या करूं ?

हिलोरें लेने लगता है मेरे भीतर का पानी
समन्दर की अदम्य लहरों के कोलाहल में
उमड़-उमड़ उठती है मेरे रक्त में बसी हुई आग

कुहरीले सवेरों में पूरब से निकलते हुए सूरज के
साथ-साथ

और जब भी देखता हूँ
अपनी गतों में नदी के चमकते हुए कछार
लोट-पोट हो जाना चाहती है उनमें
मेरे भीतर की पृथ्वी।
उमग उमग आता है मेरे अन्तस् का आकाश
सितम्बर की शामों के रंग बिरंगे बादल चित्रों में
विचरते हुए।

जाग उठती हैं मेरे भीतर सोयी हुई खुशबूएं
बसन्ती हवाओं की प्रमदा सुगन्धों के संगीत में।
और जब देखता हूँ
लोगों के एक समूह को एक साथ आन्दोलित होते हुए
एक कतार में कवायद करते हुए
एक लय में कुदालें चलाते हुए
और एक स्वर में ध्वजाएं उठाते हुए
तो मचल मचल उठता है मेरा दिल
उनमें घुल मिल जाने के लिए
जैसे बहुत देर से बिछुड़ा हुआ कोई बच्चा
अपनी माँ को देख कर
उसकी गोद में जाने को मचलता है।

इस संसार में अभिव्यक्त किसी अज्ञात चेतना में मेरा
विश्वास नहीं
पर इस संसार के एक एक कण के साथ
मैं जो कोई गहरी आन्तरिक एकता महसूस करता हूँ

कोई है ?

चौसियों मंजिल की
एक फौलाद और कंक्रीट की गगन चुम्बी बिल्डिंग पर
बैठा है एक दानव
    डालरों की एक विशाल थैली पर
    हाइड्रोजन बम का सिर।
फेंक रहा है लोहे के हाथों से
    बम्बार हवाई जहाज और हेलीकॉप्टर
    गोरे और काले जरखरीद गुलामों के हुजूम

नये आयाम

अब सिर्फ़ ज़मीनें और मकान ही नहीं,
जुलूस और आन्दोलन भी बेचे और ख़रीदे जाते हैं।
गहने ही नहीं,
आज़ादियाँ और क्रान्तियाँ भी गिरवी रखी जाने लगी हैं।
अब सिर्फ़ गेहूँ और चावल ही नहीं
नीतियाँ भी उधार ली और दी जाती हैं।
वह ज़माना गया
जब क़लई सिर्फ़ बर्तनों पर ही होती थी

प्रतिश्रुति का गीत

मैं आज के युग में जी रहा हूँ
और आज की
—एकदम आज की—संक्रान्ति झेल रहा हूँ
पर मैं असंगतियों और विडम्बनाओं के,
विरोध और आत्महनन के गीत क्यों गाऊँ?
जब कि मेरे आसपास सब कुछ वैसा ही नहीं है

तमाम दूरियों के बावजूद मेरे माता पिता
अभी मेरे लिये बेगाने नहीं हुए हैं

अपने घर में मैं अभी आउटसाइडर नहीं हुआ हूँ
मेरी पत्नी अभी मेरे लिये अजनबी नहीं बनी है
मेरे बच्चे अभी मुझे अपना समझते हैं।

यह नहीं कि मुझे कभी अकेलापन नहीं सताता
पर अधिकतर मैं जब भी तनहा होता हूँ
अपने अकेलेपन का

अपने साथियों के कन्धों पर हाथ रखता हूँ
झील में पड़ी हुई पुष्कर की तरह
अपनी प्रिया की आँखों में खो सकता हूँ

स्वच्छन्द सरोवर में डुबकियाँ लगाते हुए
    एक जलपंछी की तरह
अपने विद्यार्थियों के चेहरों पर छिड़क सकता हूँ
    गर्मी की किसी दोपहर में
    प्यास से सुर्ख़ धूप ठण्डे पानी की तरह
और अपनी किताबों के पन्नों पर बिखेर सकता हूँ
    गुलाब की ताज़ा पंखुरियों की तरह
या नयी नस्लों के आकाश में उड़ा सकता हूँ
    एक नन्हे से सफ़ेद कबूतर की तरह !
और जब यह कुछ भी सम्भव न हो
    तो किसी भी जाते हुए राहगीर के पल्ले से बाँध सकता हूँ, उसे
    रोटी और आचार की एक छोटी सी पोटली की तरह !
कौन मुझे सिखा हुई दियानतदारियों से असहाय करे लगे ?
जब कि मैं उन्हें देखता हूँ
लोगों के लिये लड़ते हुए

बिना टूटे जेलों में सड़ते हुए !
दुनिया मुझे सिफलिस से बजबजाई हुई
मवाद चुआती हुई
मुट्ठियों में अपनी मौत की विरासत बांध कर जाती हुई
कैसे दिखाई दे ?
और क्यों लगें फुंसियों की तरह आकाश के तारे
जब कि फुंसियों और बीमार मनों—
दोनों के ही लिये अस्पताल मौजूद हैं ?

मैं विक्षेप के विद्रूप और मृत्यु के संग्राम की कविताएं कैसे
लिखूं ?
जब कि सब घाता के बावजूद
मेरा देश अभी अमेरिका नहीं हुआ है
मेरी धरती अभी चमगादड़ों की दुर्गन्धित गुफाओं
और बारूद के जहरीले धुंए से घुटे खंडहरों में नहीं बदली
है
और न आकाश में मकड़ियों ने ही अपने जाले बनाये हैं

मेरी सभी हवाओं में अभी जहर नहीं घुला है
और न मेरी नदियां
बिलबिलाते हुए कीड़ों से भरी नाबदानों में ही बदली हैं
पागलखाने और चकले अभी मेरे नगरों में ही हैं
मेरे नगर अभी पागलखाना और चकला में नहीं गये हैं
साग भूनों तो मस्त हैं

पर अभी नगरों में ही तेजाबघर जलाये जाते हैं
नगरवासी अभी घरों में नहीं उतरे हैं
मनुष्यों और मनुष्यों के बीच अभी बहुत कुछ शेष है

धूप अभी निकली है
पेड़ अभी लहराता है
मेरे आसपास अभी बहुत सा उजाला है !
मैं किसलिए, टूटे मन और टूटे हुए व्यक्तित्व के गीत क्या
गाऊँ ?
जब कि मैं अपने व्यक्तित्व की हर दरार
अपनी इस देश की मिट्टी से पूरा भरता हूँ
और अपने मन की हर चिन्ता को
अपनी इन्हीं बाँहों के घेरे से जोड़ सकता हूँ !

यह नहीं कि मैं अपने परिवेश की असंगतियों के प्रति
अंधा हूँ
या कि मैं उनकी विरूपताओं को देखना नहीं चाहता
नहीं, मैं उन्हें देखता हूँ
पर मैं सिर्फ उन्हें ही नहीं देखता
और न उनके गौरव गायन में ही अपनी कविताओं को
लगाना
चाहता हूँ
मैं उन विरूपताओं की लपटों के बीच
प्रह्लाद की तरह सिर उठाते हुए सौंदर्य को भी देखता
हूँ !
और उस संगति को भी
जो इन असंगतियों की खाई पाट कर आ जाती है !
मैं अपने चारों ओर फैली हुई संक्रांति से नहीं,
उसके बीच से अपने नक्श उभारती हुई शांति से प्रति
श्रुत हूँ !
अस्तित्व की बहुरंगियों के रेगिस्तान का नहीं

उसके नीचे वहती हुई मायकना की उम अन्त सलिला का
कवि हूँ
जो पाताल तोड कुए के रूप में फूट पडना चाहती है।
मैं उसकी मुक्ति के लिये सकल्पित हूँ।